ग्यारह सितंबर के बाद

हिन्दी ADDA

अनवर सुहैल

ग्यारह सितंबर के बाद

ग्यारह सितंबर के बाद करीमपुरा में एक ही दिन, एक साथ दो बातें ऐसी हुईं, जिससे चिपकू तिवारी जैसे लोगों को बतकही का मसाला मिल गया।

अव्वल तो ये कि हनीफ ने अपनी खास मियाँकट दाढ़ी कटवा ली। दूजा स्कूप अहमद ने जुटा दिया... जाने उसे क्या हुआ कि वह दँतनिपोरी छोड़ पक्का नमाजी बन गया और उसने चिकने चेहरे पर बेतरतीब दाढ़ी बढ़ानी शुरू कर दी।

दोनों ही मुकामी पोस्ट-आफिस के मुलाजिम।

अहमद, एक प्रगतिशील युवक अनायास ही घनघोर-नमाजी कैसे बना?

हनीफ ने दाढ़ी क्यों कटवाई?

सन चौरासी के दंगों के बाद सिखों ने अपने केश क्यों कुतरवाए...

अहमद आज इन सवालों से जूझ रहा है।

अहमद की चिंताओं को कुमार समझ न पा रहा था। कल तक तो सब ठीक-ठाक था।

आज अचानक अहमद को क्या हो गया?

वे दोनों ढाबे पर बैठे चाय की प्रतीक्षा कर रहे थे।

कुमार उसे समझाना चाह रहा था - 'छोड़ यार अहमद दुनियादारी को... बस 'वेट एँड वाच' ...जो होगा ठीक ही होगा।'

'वो बात नहीं है यार... कुछ समझ में नहीं आता कि क्या किया जाए?' ...अहमद उसी तरह तनाव में था, 'जाने कब तक हम लोगों को वतनपरस्ती का सबूत देने के लिए मजबूर किया जाता रहेगा।'

कुमार खामोश ही रहा।

वे दोनों चौंतीस-पैंतीस साल के युवक थे।

करीमपुरा से दोनों एक साथ पोस्ट आफिस काम पर आते।

आफिस में अक्सर लोग उन्हें एक साथ देख मजाक करते - 'अखंड भारत की एकता के नमूने...'

अहमद का दिमागी संतुलन गड़बड़ाने लगा।

'अब मुझे लगने लगा है कि मैं इस मुल्क में एक किराएदार के हैसियत से रह रहा हूँ, समझे कुमार... एक किरायेदार की तरह...!'

यही तो बात हुई थी उन दोनों के बीच ...फिर जाने क्यों अहमद के जीवन में अचानक बदलाव आ गया?

हनीफ के बारे में अहमद सोचने लगा।

पोस्ट-आफिस की डाक थैलियों को बस-स्टैंड तथा रेलवे स्टेशन पहुँचाने वाले रिक्शा-चालक हनीफ। बा-वक्त पंचगाना नमाज अदा करना और लोगों में बेहद खुलूस के साथ पेश आना उसकी पहचान है। पीर-बाबा की मजार पर हर जुमेरात वह फातिहा-दरूद पढ़ने जाता है। अहमद को अक्सर धार्मिक मामलात में वही सलाह-मशविरा किया करता।

यकीन मानिए कि हनीफ एक सीधा-सादा, नेक-बख्त, दीनदार या यूँ कहें कि धर्म-भीरु किस्म का इनसान है। वह खामखाँ किसी से मसले-मसायल या कि राजनीतिक उथल-पुथल पर छिड़ी बहस में कभी हिस्सा नहीं लेता। हाँ, अपने विवेक के मुताबिक आड़े वक्त बचाव में एक मशहूर शेर का पहला मिसरा वह अक्सर बुदबुदाया करता - 'उनका जो काम है वह अहले सियासत जाने...'

हुआ ये कि ग्यारह सितंबर के बाद दुनिया के समीकरण ऐसे बदले कि कोई भी अपने को निरपेक्ष साबित नहीं कर पा रहा था। सिर्फ दो ही विकल्प! अमेरिका के आतंक-विरोधी कार्यक्रम का समर्थन या विरोध... बीच का कोई रास्ता नहीं। यह तो एक बात हुई। ठीक इसी के साथ दो बातें गूँजी कि दुनिया में आतंकवाद को बढ़ावा देने वाले लोग इस्लामी धर्मावलंबी हैं, दूसरा यह कि इस्लाम आतंकवादी धर्म नहीं। वही मिसाल कि ठंडा और गर्म एक साथ... तर्क की कोई गुंजाइश नहीं।

बहुत जल्दबाजी में ये बात स्थापित कर दी गई कि सारी दुनिया में आतंकवाद के बीज बोने वाले और संसार को चौदहवीं सदी में ले जाने वाले लोग मुसलमान ही हैं।

अरबियों-अफगानियों की तरह दाढ़ी के कारण धोखे में सिखों पर भी अमरीका में अत्याचार हुए। बड़े मासूम होते हैं अमरीकी!

वे मुसलमानों और सिखों में भेद नहीं कर पाते। बड़े अमन-पसंद हैं वे। आज उन्हें किसी ने ललकारा है। अमरीकियों को संसार में कोई भी ललकार नहीं सकता। वे बहुत गुस्से में हैं। इसीलिए उनसे 'मिस्टेक' हो सकती है। 'मिस्टेक' पर हनीफ को याद आया...

उर्दू में मंटो नाम का एक सिरफिरा कथाकार हुआ है। जिसने दंगाइयों की मानसिकता पर एक नायाब कहानी लिखी थी। 'मिस्टेक हो गया' ...जिसमें दंगाई धोखे में अपनी ही बिरादरी के एक व्यक्ति का कत्ल कर देते हैं। असलियत जानने पर उनमें यही संवेदना फूटी - 'कि साला मिस्टेक हो गया...'

हनीफ ने शायद इसी लिए अपनी दाढ़ी कटवा ली हो, कि कहीं वह किसी 'मिस्टेक' का शिकार न हो जाए।

और इस तरह चिपकू तिवारी जैसे लोगों को बतकही का मसाला मिल गया...

चिपकू तिवारी है भी गुरू-चीज...'गप्पोलोजी' का प्रोफेसर...

खूब चुटकी लेते हैं पोस्ट-मास्टर श्रीवास्तव साहब भी। हैं भी रोम के नीरो। अपनी ही धुन में मगन... चमचों की एक बड़ी फौज के मालिक। करीमपुरा इस क्षेत्र का ऐसा पोस्ट आफिस, जिसमें सालाना एक-डेढ़ करोड़ की एन.एस.सी. बेची जाती है। बचत-खाता योगदान में जिले की यह सबसे बड़ी यूनिट है। इस औद्‌योगिक-नगर में पिछले कई सालों से जमे हैं श्रीवास्तव साहब। यदि कभी उनका कहीं तबादला हुआ भी तो एड़ी-चोटी का जोर लगाकर आदेष रुकवा लिये। श्रीवास्तव साहब अक्सर कहा करते ---'करीमपुरा बड़ी कामधेनु जगह है...।'

सुबह-सुबह पोस्टआफिस में चिपकू तिवारी और श्रीवास्तव साहब की मंडली ने अहमद का मूड-आफ किया।

चिपकू तिवारी पहले बी.बी.सी. चैनल कहलाया करता था। लेकिन ग्यारह सितंबर के बाद वह 'अल-जजीरा' के नाम से पुकारा जाने लगा।

हुआ ये कि सुबह जैसे ही अहमद पोस्ट-आफिस में घुसा, उसे चिपकू तिवारी की आवाज सुनाई दी। वह भाँज रहा था - 'अमेरिका में सिखों के साथ गलत हो रहा है। अमेरिकन ससुरे कटुवा और सिख में फर्क नहीं कर पाते।'

फिर किसी षड्यंत्र की भनक से अहमद के कदम ठिठक गए!

वह थोड़ी देर ठहर गया, और रुक कर उनकी बातें सुनने लगा।

श्रीवास्तव साहब ने फिकरा कसा - 'चलो जो हुआ ठीक हुआ... अब जाकर इन मियाँ लोगों को अपनी टक्कर का आदमी भेंटाया है।'

'हाँ साहब, अब लड़ें ये साले मियाँ और ईसाई ... उधर इजराइल में यहूदी भी इन मियाँओं को चाँपे हुए हैं।'

'वो हनीफवा वाली बात जो तुम बता रहे थे?' - श्रीवास्तव साहब का प्रश्न।

अहमद के कान खड़े हुए। तो हनीफ भाई वाली बात यहाँ भी आ पहुँची।

- 'अरे वो हनीफवा... इधर अमेरिका ने जैसे डिक्लेयर किया कि लादेन ही उसका असल दुश्मन है, हनीफवा ने तत्काल अपनी दाढ़ी बनवा ली। आज वो मुझे सफाचट मिला तो मैंने उसे खूब रगड़ा। उससे पूछा कि 'का हनीफ भाई, अभी तो पटाखा फूटना चालू हुआ है... बस इतने में घबरा गए? हनीफवा कुच्छो जवाब नहीं दे पाया।'

भगवान दास तार बाबू की गुट-निरपेक्ष आवाज सुनाई दी।

'सन चौरासी के दंगों के बाद सिखों ने भी तो अपने केश कतरवा लिए थे। जब भारी उथल-पुथल हो तब यही तो होता है।'

अपने पीछे कुछ आवाजें सुन अहमद दफ्तर में दाखिल हुआ।

उसे देख बतकही बंद हुई।

अहमद इसी बात से बड़ा परेशान रहता है। जाने क्यों अपनी खुली बहसों में लोग उसे शामिल नहीं करते। इसी बात से उसे बड़ी कोफ्त होती। इसका सीधा मतलब यही है कि लोग उसे गैर समझते हैं।

तभी तो उसे देखकर या तो बात का टापिक बदल दिया जाएगा या कि गप बंद हो जाएगी। अक्सर उसे देख चिपकू तिवारी इस्लामी-तहजीब या धर्मशास्त्रों के बारे में उल्टे सीधे सवालात पूछने लगता है।

आजकल की ज्वलंत समस्या से उपजे कुछ शब्द, जिसे मीडिया बार-बार उछालता है, उसमें अमरीका, अल-कायदा, ओसामा बिन लादेन, अफगान, पाकिस्तान, जिहाद,

तथा इस्लामी फंडामेंटालिज्म से जुड़े अन्य अल्फाज हैं। इन्हीं शब्दों की दिन-रात जुगाली करता है मीडिया।

अहमद से चिपकू तिवारी अपनी तमाम जिज्ञासाएँ शांत किया करता। अहमद जानता है कि उसका इरादा अपनी जिज्ञासा शांत करना नहीं बल्कि अहमद को परेशान करना है।

कल ही उसने पूछा था - 'अहमद भाई ये जिहाद क्या होता है?'

अहमद उसके सवालों से परेशान हो गया।

चिपकू तिवारी प्रश्न उस समय पूछता जब श्रीवास्तव साहब फुर्सत में रहते।

श्रीवास्तव साहब उसके प्रश्नों से खूब खुश हुआ करते।

इधर अहमद इन सवालों से झुँझला जाता।

वह कहता भी कि उसने इस्लामी धर्मशास्त्रों का गहन अध्ययन नहीं किया है। कहाँ पढ़ाया था मम्मी पापा ने उसे मदरसे में। अंग्रेजी और हिंदी माध्यम से शिक्षा ग्रहण की उसने। वह तो पापा की चलती तो उसका खतना भी न हुआ होता।

बड़े अजीबोगरीब थे पापा।

मम्मी और मामुओं की पहल पर उसका खतना हुआ।

पापा कितने नाराज हुए थे। वह नहीं चाहते थे कि उनका बेटा परंपरागत मजहबी बने। वह चाहते थे कि उनका बेटा इस्लाम के बारे में स्वयं जाने और फिर विवेकानुसार फैसले करे।

मुस्लिम परिवेश से अहमद बहुत कम वाकिफ था। पापा सरकारी महकमे में 'ए' क्लास आफीसर थे ...उनका उठना बैठना सभी कुछ गैरों के बीच था। धार्मिक रूप से वह ईद-बकरीद भर में सक्रिय रहते थे। कारण कि विभागीय आला अफसरान और चहेते मातहतों के लिए दावत आदि की व्यवस्था करनी पड़ती थी। 'फ्रेंड्स' भी ऐसे कि ईद-बकरीद आदि के साथ वे अनजाने में मुहर्रम की भी मुबारकबाद दे दिया करते। उन्हें ये भी पता न होता कि मुहर्रम एक गम का मौका होता है।

मम्मी को पापा की ये आजाद-ख्याली फूटी आँख न भाती। मम्मी उन्हें समझाया करतीं। पापा हँस देते - 'आखिरी वक्त में क्या खाक मुसलमाँ होंगे।'

वाकई वे मरने को मर गए किंतु ईद-बकरीद के अलावा किसी तीसरी नमाज के लिए उन्हें समय मिलना था, न मिला। उस हिसाब से अहमद कुछ ठीक था। वह जुमा की नमाज अवश्य अदा किया करता। मम्मी की टोका-टाकी के बाद धीरे-धीरे उसने अपनी जिंदगी में यह आदत डाली। निकाह के बाद कुलसूम की खुशियों के लिए अव्वल-आखिर रोजा भी अब वह रखने लगा था।

अहमद के पापा एक आजाद ख्याल मुसलमान थे। वह अक्सर अल्लामा इकबाल का एक मशहूर शेर दुहराया करते -

'कौम क्या है कौमों की इमामत क्या है।'

इसे क्या जानें ये दो रकअत के इमाम !'

चूँकि मम्मी एक पक्के मजहबी घराने से ताल्लुक रखती थीं, इसलिए पापा की दाल न गल पाती। कहते हैं कि दादा-जान को पापा के बारे में इल्म था कि उनका ये बेटा मजहबी नहीं है। इसलिए बहुत सोच विचार कर वे एक मजहबी घराने से बहू लाए थे, ताकि खानदान में इस्लामी परंपराएँ जीवित बची रहें। अहमद के पापा वकील थे। वह एक कामयाब वकील थे। काफी धन कमाया उन्होंने। कहते भी थे कि अगर कहीं जन्नत है तो वह झूठों के लिए नहीं। इसलिए वहाँ की ऐशो-इशरत की क्या लालच पालें। सारे वकील संगी-साथी तो वहाँ जहन्नुम में मिल ही जाएँगे। अच्छी कंपनी रहेगी।

इस दलील के साथ वह एक जोरदार ठहाका लगाया करते।

एक सड़क हादसे में उनका इंतकाल हुआ था। तब अहमद स्नातक स्तर की पढ़ाई कर रहा था। छिन्न-भिन्न हो गई थी जिंदगी...। उस बुरे वक्त में मामुओं ने मम्मी और अहमद को सँभाल लिया था।

ऐसे स्वतंत्र विचारों वाले पिता का पुत्र था अहमद और उसे चिपकू तिवारी वगैरा एक कठमुल्ला मुसलमान मान कर सताना चाहते।

इसीलिए अक्सर अहमद का दिमाग खराब रहा करता।

वह कुमार से कहा भी करता - 'कुमार भाई, मैं क्या करूँ? तुमने देखा ही है कि मेरी कोई भी अदा ऐसी नहीं कि लोग मुझे एक मुसलमान समझें। तुममें और मुझमें कोई अंतर कर सकता है? मैं न तो दाढ़ी ही रखता हूँ और न ही दिन-रात नमाजें ही पढ़ा करता हूँ। तुमने देखा होगा कि मैंने कभी सरकार अथवा हिंदुओं को कोसा नहीं कि इस मुल्क में मुसलमानों के साथ अन्याय किया जा रहा है। जबकि उल्टे मैंने यही पाया कि मुसलमानों की बदहाली का कारण उनकी अशिक्षा और दकियानूसी-पन है। चार पैसे पास आए नहीं कि खुद को नवाबों शहंशाहों का वंशज समझने लगेंगे। बच्चों के पास कपड़े हों या न हों। स्कूल से उन्हें निकाल दिए जाने की नोटिसें मिली हों, इसकी कोई चिंता नहीं। सब प्राथमिकताएँ दरकिनार... घर में बिरयानी बननी ही चाहिए, वरना इस कमाई का क्या मतलब! तालीम के नाम पर वही मदरसे और काम के नाम पर तमाम हुनर वाले काम! कम उम्र में विवाह और फिर वही जिंदगी के मसले। फिर भी लोग मुझे अपनी तरह का क्यों नहीं मानते...?'

कुमार अहमद के प्रश्नों को सुन चुप लगा गया। वह क्या जवाब देता**?**

ठीक इसी तरह अहमद चिपकू तिवारी के प्रश्नों का क्या जवाब देता**?**

वह हिंदू मिथकों, पुराण कथाओं, और धर्म-शास्त्रों के बारे में तो आत्मविश्वास के साथ बातें कर सकता था, किंतु इस्लामी दुनिया के बारे में उसकी जानकारी लगभग सिफर थी।

'मुझे एक मुसलमान क्यों समझा जाता है, जबकि मैंने कभी भी तुमको हिंदू वगैरा नहीं माना। मुझे एक सामान्य भारतीय शहरी कब समझा जाएगा?'

अहमद की आवाज में दर्द था।

कल की तो बात है।

वे दोनों आदतन बस-स्टैंड के ढाबे में बैठे चाय की प्रतीक्षा में थे। दफ्तर से चुराए चंद फुर्सत के पल ...यही तो वह जगह है जहाँ वे दोनों अपने दिल की बात किया करते।

चाय वाला चाय लेकर आ गया।

अहमद की तंद्रा भंग हुई।

अंबिकापुर से सुपर आ गई थी। बस-स्टैंड में चहल-पहल बढ़ गई। सुपर से काफी सवारियाँ उतरती हैं।

करीमपुर चूँकि इलाके का व्यापारिक केंद्र है अतः यहाँ सदा चहल-पहल रहती है।

चाय का घूँट भरते कुमार ने अहमद को टोका।

'तुम इतनी जल्दी मायूस क्यों हो जाते हो? क्या यही अल्पसंख्यक ग्रंथि है, जिससे मुल्क के तमाम अल्पसंख्यक प्रभावित हैं?'

'कैसे बताऊँ कि बचपन से मैं कितना प्रताड़ित होता रहा हूँ।' - अहमद सोच के सागर में गोते मारने लगा।

'जब मैं छोटा था तब सहपाठियों ने जल्द ही मुझे अहसास करा दिया कि मैं उनकी तरह एक सामान्य बच्चा नहीं, बल्कि एक 'कटुआ' हूँ! वे अक्सर मेरी निकर खींचते और कहते कि 'अबे साले, अपना कटा - दिखा न! पूरा उड़ा देते हैं कि कुछ बचता भी है?' स्कूल के पास की मस्जिद से जुहर के अजान की आवाज गूँजती तो पूरी क्लास मेरी तरफ देखकर हँसती। जितनी देर अजान की आवाज आती रहती मैं असामान्य बना रहता। इतिहास का पीरियड उपाध्याय सर लिया करते। जाने क्यों उन्हें मुसलमानों से चिढ़ थी कि वे मुगल-सम्राटों का जिक्र करते आक्रामक हो जाते। उनकी आवाज में घृणा कूट-कूट कर भरी होती। उनके व्याख्यान का यह प्रभाव पड़ता कि अंत में पूरी क्लास के बच्चे मुझे उस काल के काले कारनामों का मुजरिम मान बैठते।'

कुमार ने गहरी साँस ली - 'छोड़ो यार... दुनिया में जो फेर-बदल चल रहा है उससे लगता है कि इनसानों के बीच खाईं अब बढ़ती ही जाएगी। आज देखो न, अफगानियों के पास रोटी कोई समस्या नहीं। नई सदी में धर्मांधता, एक बड़ी समस्या बन कर उभरी है।'

अहमद बेहद दुखी हो रहा था।

कुमार ने माहौल नरम बनाने के लिए चुटकी ली - 'अहमद, सुपर से आज पूँछ-वाली मैडम नहीं उतरीं। लगता है उन्हें महीने के कष्ट भरे तीन दिनों का चक्कर तो नही?'

पूँछ-वाली यानी की पोनी-टेल वाली आधुनिका...

कुमार की इस बात पर अन्य दिन कितनी जोर का ठहाका उठता था।

अहमद की खिन्नता के लिए क्या जतन करे कुमार!

चाय कब खतम हो गई पता ही न चला।

ढाबे के बाहर पान गुमटी के पास वे कुछ देर रुके। अहमद ने सिगरेट पी। कुमार ने पान खाया। अहमद जब तनाव में रहता, तब वह सिगरेट पीना पसंद करता। उसके सिगरेट पीने का अंदाज भी बड़ा आक्रामक हुआ करता।

वह मुट्ठी बाँधकर उँगलियों के बीच सिगरेट फँसा कर, मुट्ठी को होंठों के बीच टाइट सटा लेता। पूरी ताकत से मुँह से भरपूर धुआँ खींचता। कुछ पल साँस अंदर रख कर धुआँ अंदर के तमाम गली-कूचों में घूमने-भटकने देता। फिर बड़ी निर्दयता से होंठों को बिचकाकर जो धुआँ फेफड़े सोख न पाए हों, उसे बाहर निकाल फेंकता।

कुमार ने उसके सिगरेट पीने के अंदाज से जान लिया कि आज अहमद बहुत 'टेंशन' में है।

वे दोनों चुपचाप पोस्ट-आफिस में आकर अपने-अपने जॉब में व्यस्त हो गए।

अहमद को कहाँ पता था कि उसके जीवन में इतनी बड़ी तब्दीली आएगी।

वह तेरह सितंबर की शाम थी।

अहमद घर पहुँचा... देखा कि कुलसूम टीवी से चिपकी हुई है।

कुलसूम टीवी पर समाचार सुन रही है।

आश्चर्य! घनघोर आश्चर्य!! ऐसा कैसे हो गया...

अहमद ने सोचा, कुलसूम को तो समाचार चैनलों से कितनी नफरत है...।

वह अक्सर अहमद को टोका करती - 'जब आप अखबार पढ़ते ही हैं, तब आपको समाचार सुनने की क्या जरूरत... इससे अच्छा कि आप कोई धारावाहिक ही देख लिया करें। पूरा दिन एक ही खबर को घसीटते हैं ये समाचार चैनल... जिस तरह एक बार खाने के बाद भैंस जुगाली करती है। जाने कहाँ से इनको भी आजकल इतने ढेर सारे प्रायोजक मिल जा रहे हैं।'

अहमद क्या बताता। उसे मालूम है कि खाते-पीते लोगों के लिए आजकल समाचारों की क्या अहमियत है। अहमद जानता है कि समकालीन घटनाओं और उथल-पुथल से कटकर नहीं रहा जा सकता। यह सूचना-क्रांति का दौर है। करीमपुरा के अन्य मुसलमानों तरह उसे अपना जीवन नहीं गुजारना। वह नए जमाने का एक सजग,

चेतना-संपन्न युवक है। उसे मूढ़ बने नहीं रहना है। इसी लिए वह हिंदी अखबार पढ़ता है। हिंदी में थोड़ी बहुत साहित्यिक अभिव्यक्तियाँ भी कर लेता।

अहमद जानता है कि मीडिया आजकल नई से नई खबरें जुटाने में कैसी भी 'एक्सरसाइज' कर सकता है। चाहे वह डायना की मृत्यु से जुड़ा प्रसंग हो, नेपाल के राज परिवार के जघन्य हत्याकांड का मामला हो, तहलका-ताबूत हो या कि मौजूदा अमरीकी संकट... अचार, तेल, साबुन, जूता-चप्पल, गहना-जेवर, काम-शक्तिवर्धक औषधियों और गर्भ-निरोधक आदि के उत्पादकों एवम वितरकों से भरपूर विज्ञापन मिलता है समाचार चैनलों को। यही कारण है कि समाचार चैनल आजकल अन्य चैनलों से अधिक मुनाफा कमा रहे हैं।

कुलसूम न्यूज सुनने में इतनी मगन थी कि उसे पता ही न चला कि अहमद काम से वापस आ गया है।

कुलसूम बीबीसी के समाचार बुलेटिन सुन रही थी। स्क्रीन पर ओसामा बिन लादेन की तस्वीर उठाए पाकिस्तानी नौजवानों के जुलूस पर पुलिस ताबड़-तोड़ लाठी चला रही है। अमरीकी प्रेसीडेंट बुश और लादेन के चेहरे का मिला जुला कोलाज इस तरह बनाया गया था कि ये जो लड़ाई अफगान की धरती पर लड़ी जानी है वह दो आदमियों के बीच की लड़ाई हो।

सनसनीखेज समाचारों से भरपूर वह एक बड़ा ही खतरनाक दिन था।

अहमद कुलसूम की बगल में जा बैठा।

कुलसूम घबराई हुई थी।

ऐसे ही बाबरी-मस्जिद विध्वंस के समय कुलसूम घबरा गई थी।

आज भी उसका चेहरा स्याह था। कुलसूम किसी गहन चिंता में डूबी हुई थी।

अहमद ने टीवी के स्क्रीन पर नजरें गड़ाॆइं। वहाँ उसे बुश-लादेन की तस्वीरों के साथ चिपकू तिवारी और श्रीवास्तव साहब के खिल्लियाँ उड़ाते चेहरे नजर आने लगे। उसे महसूस हुआ कि चारों तरफ चिपकू तिवारी की सरगोशियाँ और कहकहे गूँज रहे हैं।

अहमद का दिमाग चकराने लगा।

जब कुलसूम ने अहमद की देखा तो वह घबराकर उठ खड़ी हुई।

उसने तत्काल अहमद को बाँहों का सहारा देकर कुर्सी पर बिठाया। फिर वह पानी लेने किचन चली गई। पानी पीकर अहमद को कुछ राहत मिली।

उसने कुलसूम से कहा - 'जानती हो ...सन चौरासी के दंगों के बाद अपने पुराने मकान के सामने रहने वाले सिख परिवार के तमाम मर्दों ने अपने केश कुतरवा लिए थे।'

कुलसूम की समझ में कुछ न आया। फिर भी उसने पति की हाँ में हाँ मिलाई -'हाँ, हाँ, परमजीते के भाई और बाप दाढ़ी-बाल बन जाने के बाद पहचान ही में न आते थे?'

'बड़ी थू-थू मची है कुलसूम चारों तरफ... हर आदमी हमें लादेन का हिमायती समझता है। हम उसकी लाख मजम्मत करें कोई फर्क नहीं पड़ता।' अहमद की आवाज हताशा से लबरेज थी।

अचानक अहमद ने कुलसूम से कहा, 'मगरिब की नमाज का वक्त हो रहा है। मेरा पैजामा-कुर्ता और टोपी तो निकाल दो।'

कुलसूम चौंक पड़ी।

आज उसे अपना अहमद डरा-सहमा और कमजोर-सा नजर आ रहा था।

https://www.hindiadda.com/gyaarah-sitambar-ke-baad/